बाइबल टीचर

वर्ष 18 | अप्रैल 2021 | अंक 5

सम्पादकीय

जो लोग आश्चर्यक्रमों को करने का दावा करते हैं

कुछ लोग बाइबल में जो आश्चर्य क्रम होते थे उसमें विश्वास नहीं करते। कई लोग यह दावा करते हैं कि जो अद्भुत कार्य यीशु और प्रेरितों ने किये थे वे भी कर सकते हैं। बाइबल के आश्चर्यक्रम वास्तव में ऐसे थे जो सबके सामने हुए थे। (मत्ती 4:23-35; 10:8; प्रेरितों 5:12) अपने इस लेख में हम यह देखना चाहेंगे कि अद्भुत कार्य या आश्चर्यक्रमों की वास्तविकता क्या है?

सबसे पहली बात आश्चर्यक्रमों के बारे में हम यह देखते हैं कि परमेश्वर ने कहा था और इस सृष्टि की रचना हो गई। यह एक अद्भुत बात है कि इसका वचन इतना शक्तिशाली है कि केवल बोलने से ही उसने सृष्टि की रचना कर दी। (उत्पत्ति 1 अध्याय)। सृष्टि में सूर्य चांद सितारे तथा साग पात उसके वचन द्वारा उत्पन्न हो गये। उसने प्राकृति के सारे नियम बनाये और आज संसार में सारी बातें नियम अनुसार होती है। हम कह सकते हैं कि यह आश्चर्यक्रम हैं एक आश्चर्यक्रम वो होता है जो प्राकृति के नियमों के विपरित होता है। संसार में महामारियां, तूफान और बाढ़ आती है पर यह आश्चर्यक्रम नहीं है।

बाइबल के पुराने नियम और नये नियम में बहुत सारे आश्चर्यक्रम हुए थे। मूसा की लाठी सांप बन गई थी और फिर से वह सांप लाठी बन गई थी। (निर्गमन 4:2-4)। जब लाल समुद्र दो हिस्सो में बंट गया था तब इस्रायली लोगों ने उसे आराम से पार कर लिया था। (निर्गमन 14:21)। जब एक कुल्हाडी को ऐसा कर दिया गया था कि वो पानी में तैर रही थी (2 राजा 6:5-6)। एक व्यक्ति को कोढ़ था और वह यरदन नदी में डुबकी लगाकर ठीक हो गया था। यानि उसका कोढ़ साफ हो गया था। (2 राजा 5)। यह कुछ ऐसे अद्भुत कार्य थे जो पुराने नियम में हुए थे।

जब प्रभु यीशु इस पृथ्वी पर था तो उसने लोगों के बीच में रहकर बहुत से कार्य किये। एक बार उसने तूफान को डांटा और शांत कर दिया। (मत्ती 8:22-27)। पांच रोटी और दो मछलियों से उसने पांच हजार लोगों को पेट भर कर खाना खिलाया। (यूहन्ना 6:1-13)। एक जन्म से अंधे व्यक्ति को उसने आंखों की

रोशनी दे दी (यहूदा 9)। उसने लोगों की विभिन्न प्रकार की बीमारियों को चंगा किया। (मत्ती 8:16)। उसने मृतकों को जिंदा कर दिया (मत्ती 9:18-26; लूका 7:11-15)। इनको आश्चर्यक्रम कहा जाता था। यह दिखावे के लिये नहीं किये जाते थे। एक बार यीशु ने अपनी सामर्थ से भयानक तूफान को रोक दिया था।

आश्चर्यक्रम या अद्‌भुत कार्य करने का उसका एक उद्देश्य था। एक समय एक अंधा व्यक्ति एक दम देखने लगा था तथा लाजर को जो मृतक था, आवाज लगाई तो वह जी उठा, इन सब बातों को करने वाला कारण था ताकि लोग यीशु में विश्वास लाये। जैसे कि यूहन्ना 20:30-31 में हम पढ़ते हैं कि यीशु ने यह आश्चर्यक्रम इसलिये किये थे ताकि लोग उसमें विश्वास करे कि उसे परमेश्वर ने भेजा है। यहूदियों का एक लीडर यीशु के पास आकर उससे कहने लगा कि ''रब्बी तू परमेश्वर की ओर से गुरू होकर आया है; क्योंकि कोई इन चिन्हों को जो तू दिखाता है, यदि परमेश्वर उसके साथ न हो, तो नहीं दिखा सकता।'' (यूहन्ना 3:2)।

जब यह खबर आई कि लाजरस बीमार है तो यीशु ने वहां जाने में थोड़ी देर कर दी (यूहन्ना 11:6)। जब लाजरस की मृत्यु हो गई तब यीशु ने अपने चेलों से कहा, और मैं तुम्हारे कारण आनंदित हूं कि मैं वहां न था जिससे तुम विश्वास करो, परन्तु अब आओ हम उसके पास चले (यूहन्ना 11:15)। यीशु लाजर की कब्र पर गया, जो चार दिन से मरा हुआ था, ओर वहां उसने उसे जिंदा किया। इस सब को देखकर कई यहूदियों ने भी उस पर विश्वास किया और अपनी आंखों से इस बड़े आश्चर्यक्रम को देखा। क्या आज संसार में यीशु की तरह ऐसा कोई कर सकता है? पतरस ने अपने प्रचार में लोगों से कहा था, हे इस्राएलियों, ये बातें सुनो, कि यीशु नासरी एक मनुष्य था जिसका परमेश्वर की ओर से होने का प्रमाण उन सामर्थ के कामों और आश्चर्य के कामों और चिन्हों से प्रगट है, जो परमेश्वर ने तुम्हारे बीच उसके द्वारा कर दिखलाए जिसे तुम आप ही जानते हो (प्रेरितां 2:22) आज हम यह देखते है कई प्रचारक लोगों को यह कहकर मूर्ख बनाते हैं कि वे चमत्कार कर रहे हैं तथा कूदना-फांदना और उछलना जैसी हरकतें करते हैं जो कि सरासर गलत है। हम कहीं भी नहीं पढ़ते कि यीशु और उसके चेले सामर्थ के साथ ऐसी हरकते करते थे। पवित्र आत्मा हमें नम्रता सिखाता है। ऐसे प्रचारकों को यह समझना चाहिए कि ऐसा करना परमेश्वर के वचन की निंदा करना है। आश्चर्यक्रम जो यीशु और उसके प्रेरित करते थे। उनका उद्देश्य आज समाप्त हो गया है। अब हमें लोगों को यीशु ओर उसके सुसमाचार को सुनाना है। क्योंकि विश्वास सुनने से और सुनाना मसीह के वचन से होता है। (रोमियों 10:17) यीशु ने कहा था, तुम सारे जगत में जाकर सारी सृष्टि के लोगों को सुसमाचार प्रचार करो। (मरकूस 16:15)। आगे हम पढ़ते हैं कि लिखा है विश्वास करने वालो में यह चिन्ह होंगे अर्थात प्रेरित लोगों द्वारा जो लोग विश्वास करेंगे उनके बीच में यह चिन्ह होंगे परन्तु किसके द्वारा? प्रेरितों द्वारा (प्रेरितों 5:12)। आज हमारे बीच कोई प्रेरित नहीं है। इसलिये बाइबल कहती है धोखा ना खाओ परमेश्वर ठट्‌ठों में नहीं उड़ाया जाता (गलतियों 6:7)

और आगे लिखा है कि यह प्रेरित लोगों के बीच में गये और उन्होंने उनके बीच प्रचार किया। बाइबल बताती है कि उन्होंने वचन को आश्चर्यक्रमों से ही दृण किया। (इब्रानियों 2:3-4)। जो लोग आज यह दावा करते हैं कि वे चमत्कार कर रहे हैं उनसे आप यह सवाल पूछिये-

1. क्या जो हुआ है, वो वास्तव में एक चमत्कार है? क्या सूखा हुआ हाथ पहले जैसा हो गया? क्या जन्म से अंधा फिर से देखने लगा? क्या कोरोना वायरस हाथ लगाकर या फूंक मारकर भाग गया? आप कहते है कि आपके पास सामर्थ है।

2. क्या सुबह या शाम को जो आंधी आई थी, उसे आपने शांत कर दिया? यीशु ने तूफान को ऐसी डांट लगाई थी कि वो शांत हो गया।

3. हमारे पड़ोस में एक आदमी 40 साल से अंधा है, क्या आप उसे रोशनी दिलवा सकते हैं? पतरस और यूहन्ना जो प्रेरित थे उन्होंने जन्म के एक लंगड़े को कहा यीशु नासरी के नाम से चल फिर और वह बिना किसी सहारे के उछलकर खड़ा हो गया। (यूहन्ना 3)। क्या आप उस सड़क पर बैठे हुए लंगड़े को ठीक कर सकते है?

4. अभी-अभी हमारे यहां कलीसिया के एक व्यक्ति की मृत्यु हो गई है क्या आप लाजरस की तरह उसे जीवित कर सकते हैं? एक ओर विशेष बात यह है कि जब यीशु और प्रेरित अद्भुत कार्य करते थे तो भीड़ की भीड़ उन्हें देखती थी वहां कोई उछल-कूद और तमाशा नहीं होता था। लोग अपनी आंखों से सब देखते थे।

प्रेरितों के हाथों द्वारा यह अद्भुत कार्य होते थे। (प्रेरितों 5:12) लोग यह देखकर यीशु में विश्वास लाते थे। यह लोग यानि यीशु तथा प्रेरित कभी भी तेल या पानी की शीशी नहीं बांटते थे। और न ही दान मांगते थे। आज कई लोग अलग-अलग प्रार्थनाओं के लिये दान मांगते हैं। नौकरी रोजगार के लिये, संतान पाने के लिये नये घर या कार के लिये। कई बार ऐसा लगता है कि धर्म के नाम पर लोग धंधा कर रहे हैं।

आज सबसे अधिक लोगों को यीशु और उसके सुसमाचार की आवश्यकता हैं तथा संसारिक लाभ लेने के लिये यीशु में विश्वास करना व्यर्थ है। यीशु परमेश्वर का पुत्र है। उसके नाम में उद्धार है। (प्रेरितों 4:12)। क्या आपने यीशु के इन शब्दों को सुना है कि यदि मनुष्य सारे जगत को प्राप्त करे और अपने प्राण अर्थात आत्मा की हानि उठाये तो उसे क्या लाभ होगा या आत्मा के बदले आप क्या दोगे (मत्ती 16 : 26)। आज आपकी सबसे बड़ी आवश्यकता है, अपनी आत्मा को पाप से बचाना। यीशु ने कहा था, उस दिन बहुतेरे मुझसे कहेंगे कि हमने तेरे नाम से क्या भविष्यवाणी नहीं की और तेरे नाम से दुष्टात्माओं को नहीं निकाला और तेरे नाम से बहुत अचम्भे के काम नहीं किये? तब यीशु ऐसे प्रचारकों से खुलकर कह देगा, क्या कहेगा? ध्यान से पढ़िये यीशु कहता है कि मैंने तो तुम्हें कभी नहीं जाना तुम कुकर्म करने वालों हो, यानि गलत काम करने वाले इसलिये मेरे पास से चले जाओ। यह बात सुनकर एक बड़ा भय उन लोगों को लगेगा जो यीशु के नाम में

लोगों को बहकाते हैं। (मत्ती 7:21-27) को पढ़िये।

हमारे पास यीशु का सिद्ध नया नियम है (याकूब 1:25) परमेश्वर आप से क्या चाहता है? उसकी इच्छा बाइबल में है। अपने वचन को पढ़िये और जानिये उसकी इच्छा क्या है? (यूहन्ना 16:12-13; 2 पतरस 1: 3-4)। मेरी आप से बिनती है कि नये नियम से 1 कुरि. 13:8-10 को पढ़िये। लोग शायद आपको बेवकूफ बना ले, परन्तु आप परमेश्वर को बेवकूफ नहीं बना सकते।

यदि आपने अभी तक यीशु में विश्वास नहीं किया है तो आपके पास यह अवसर है कि आप उसमें विश्वास लाकर बपतिस्मा लें। (मरकुस 16:16; प्रेरितों 2:38; गलतियों 3:26-27)। वचन में लिखा है कि हे भाईयो, मैं तुम से बिनती करता हूँ, पौलूस आप से एक बिनती कर रहा है और कह रहा है कि जो लोग उस शिक्षा के विपरीत जो तुमने पाई है फूट पड़ने और ठोकर खाने के कारण होते हैं उन्हें ताड़ लिया करो और उनसे दूर रहो क्योंकि ऐसे लोग हमारे प्रभु यीशु की नहीं, परन्तु अपने पेट की सेवा करते हैं और चिकनी चुपड़ी बातों से सीधे-सादे लोगो को बहका देते हैं। (रोमियों 16:17-18)

इसलिये प्रेरित पौलूस कहता है, हम आगे को बालक न रहे, जो मनुष्यों की ठग विद्या और चतुराई से उनके भ्रम की युक्तियों की और उपदेश की, हर एक बयार से उछाले और इधर-उधर घुमाएं जाते हो। (इफि. 4:14)।

बाइबल का सुसमाचार

सनी डेविड

अब, इस समय, जिन बातों पर हम विचार करने जा रहे हैं, वे बातें इस जमीन पर सबसे अधिक महत्वपूर्ण बातें हैं। क्योंकि इन बातों का संबंध हम सबकी अमर और अविनाश आत्माओं से है। हम सब को यह जानने की आवश्यकता है, कि हम सबका केवल एक ही परमेश्वर है, जिसने हम सब को यह जीवन दिया है। उसी परमेश्वर ने हमें अपने आत्मिक स्वरूप पर उत्पन्न किया हैं इस कारण आत्मिक भाव से हम में से हर एक इंसान सदा उसी तरह वर्तमान और विद्यमान रहेगा जैसे कि स्वयं परमेश्वर विद्यमान है। अर्थात मनुष्य की आत्मा के अस्तित्व को कोई भी वस्तु नहीं मिटा सकती। ऐसे ही, हमें यह भी जानने की जरूरत है कि हम सब जमीन पर एक मुसाफिर की तरह है। और किसी भी समय हम यहां से जा सकते हैं। क्योंकि आत्मिक भाव से हम सदा वर्तमान रहेंगे तो जिस प्रकार से यह शारीरिक संसार है उसी प्रकार से एक आत्मिक संसार भी है। और जैसे कि इस शारीरिक संसार में हम सब कुछ ही समय के लिये वर्तमान हैं। उसी तरह से हम सब उस आत्मिक संसार में सदा ही विद्यमान रहेंगे। पर, जैसे कि इस पृथ्वी पर रहने के लिये

हम अपने-अपने हाथों से घर बनाते हैं, उस आत्मिक संसार में वैसा नहीं है, क्योंकि उस आत्मिक संसार में रहने के केवल दो ही स्थान है- अर्थात स्वर्ग और नरक। स्वर्ग वह स्थान है जहां पवित्र और धर्मी लोग जाकर रहेंगे। और नरक वह स्थान है जहां सब पापी और अधर्मी हमेशा के लिये रहेंगे।

ऐसे ही हमें यह भी जानने की आवश्यकता है, कि हम में से कोई भी मनुष्य पवित्र धर्मी नहीं है। यह हम मनुष्यों के दृष्टिकोण से नहीं, पर ईश्वर के दृष्टिकोण से बात कर रहे हैं। क्योंकि मनुष्य किसी मनुष्य को ऊपर से देखकर उसे धर्मी मान सकता है। लेकिन परमेश्वर की दृष्टि में, जो हम सबको भीतर से भी जानता है, हम सब अधर्मी है। यानि परमेश्वर से हम अपने पाप और अधर्म को नहीं छिपा सकते। क्योंकि सभी मनुष्य पापी और अधर्मी हैं, छोटे और मासूम बच्चों को छोड़कर, इसीलिये सभी स्वर्ग में प्रवेश करने के योग्य नहीं है। क्योंकि सबने पाप किया है।

लेकिन परमेश्वर, जिसने हमें जीवन दिया है, और जो यह जानता है कि हम अमर हैं, लेकिन तौभी पाप में है; वह हम सब से प्रेम करता है। और वह नहीं चाहता है कि कोई भी इंसान पाप के कारण नरक में जाकर दण्ड पाए। इसलिये परमेश्वर ने हमें पाप से छुटकारा पाने का एक सुसमाचार दिया है। उसने हमें पापी से पवित्र और अधर्मी से धर्मी बनने का एक उपाय दिया है। परमेश्वर की पुस्तक बाइबल में यूं लिखा है कि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा कि उसने अपना एकलौता पुत्र दे दिया ताकि जो कोई उस पर विश्वास लाए वह नाश न हो परन्तु अनन्त जीवन पाए। (यूहन्ना 3:16)।

परमेश्वर ने आरंभ में जिस प्रकार से मनुष्य को मिट्टी से बनाया था। उसी तरह से अर्थात उसी सामर्थ से परमेश्वर ने अपने वचन को एक मनुष्य का रूप देकर जमीन पर भेजा था। जिस तरह, से पहले आदम को, जिसके द्वारा पाप जगत में आया था, परमेश्वर ने अपनी सामर्थ से आश्चर्यपूर्ण ढंग से पृथ्वी पर पैदा किया था। उसी तरह से परमेश्वर ने, उस दूसरे आदम को भी, जिसके द्वारा उद्धार जगत में आया, अपनी सामर्थ से और आश्चर्यक्रम के द्वारा इस जमीन पर भेजा था। इसीलिये, वह परमेश्वर का पुत्र कहलाया था। और उसका नाम ''यीशु मसीह'' था। वह जमीन पर सारे जगत के पापों का प्रायश्चित करने को आया था। वह इस पृथ्वी पर कुल 33 सालों तक ही रहा था। और जब समय पूरा हुआ था, तो परमेश्वर ने यह होने दिया था, कि कुछ लोग उस के बैरी बन जाएं और उसकी जान के दुश्मन बन जाएं। सो वह परमेश्वर की ही इच्छा से पापियों के हाथों में पकड़वाया गया था। और फिर उस पर झूठे दोष लगाए गए थे। और वह मृत्यु दण्ड पाने के लिये दोषी ठहराया गया था। और आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व वही, परमेश्वर का पुत्र, यीशु मसीह, पलीस्तीन देश में क्रूस पर चढ़ाकर मारा गया था। पर जब वे लोग उसे क्रूस पर चढ़ा रहे थे, और उसके हाथ और पांव क्रूस पर कीलों से ठोक रहे थे, तो बाइबल में लिखा है, कि यीशु मसीह बार-बार परमेश्वर से यह प्रार्थना कर रहा था, कि ''हे पिता तू, इनका दोष इन पर मत लगाना, क्योंकि ये लोग वास्तव में जानते ही नहीं कि ये क्या कर रहे हैं।'' (लूका 23:34)।

और, वास्तव में कितनी सच्ची बात थी यह, क्योंकि यदि वे लोग सचमुच में यह विश्वास करते कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है- तो क्या वे लोग उसे क्रूस पर चढ़ाकर इस प्रकार मारते? लेकिन परमेश्वर ने यह होने दिया कि उसका पुत्र क्रूस पर चढ़ाकर मारा जाए, और वह सारे जगत के पापों के बदले में दण्ड पाए। बाइबल में लिखा है, कि उसी ने उसको, जिसमें कोई पाप नहीं था, सारे जगत के पापों के लिये दोषी मान लिया और उसे हम सब के पापों का दण्ड दिया, ताकि उसमें होकर, उसके द्वारा हम सब परमेश्वर की दृष्टि में पवित्र और धर्मी बन जाए। (2 कुरिन्थियों 5:17-21)।

और यही है परमेश्वर की बाइबल का सुसमाचार एक ऐसा सुसमाचार जो जगत में सब लोगों के लिये है। एक ऐसा सुसमाचार जो सारी दुनिया के सब लोगों के लिये है। और वह सुसमाचार यह है कि हम में से हर एक इंसान, चाहे वह कोई भी क्यों न हो, धर्मी और पवित्र बन सकता है, और स्वर्ग में जाकर स्वर्ग में रहने के योग्य बन सकता है। क्योंकि हम ने नहीं, किन्तु परमेश्वर ने हमारे पापों का दण्ड स्वयं अपने ऊपर ले लिया है। वह हमारे बदले में और हमारे स्थान पर मारा गया था। जबकि हम स्वयं अपने पापों का प्रायश्चित करने में असमर्थ थे- तो उसने खुद अपना ही लहू बहाकर हमारे पापों का प्रायश्चित कर दिया है। सो अब, हमें शक और संदेह में रहने की आवश्यकता नहीं। हम इसी जीवन में निश्चित रूप से इस बात को पक्का कर सकते हैं, और इस बात को जान सकते हैं, कि जब हम इस संसार से जाएंगे, तो हम किस स्थान में जाकर हमेशा के लिये रहेंगे।

यदि कोई यह मानता है कि परमेश्वर का पुत्र मेरे पापों का प्रायश्चित करने को क्रूस पर मारा गया था। और अपना मन फिराकर अपने पापों की क्षमा पाने के लिये बपतिस्मा लेकर, यीशु मसीह की मृत्यु और जी उठने की समानता में उसके साथ एक हो जाता है; तो उसने अपने आने वाले जीवन को स्वर्ग में सुरक्षित कर लिया है। पर क्या आपने ऐसा किया है? अगर नहीं, तो मेरा आग्रह और निवेदन है, कि अपने लिये प्रभु यीशु मसीह के बलिदान को व्यर्थ न जाने दे।

अगुवों की आवश्यकता है

जे.सी. चोट

आज के समय में कलीसिया की सबसे बड़ी आवश्यकता अच्छे अगुवों की हैं। हमें ऐसे पुरुषों की आवश्यकता है जिनका सही में हृदय परिवर्तन हुआ हो और जिनको यह पता हो कि बाइबल क्या सिखाती है, और जो सच्चाई का हमेशा पक्ष लेने को तैयार हो। हमें ऐसे पुरुषों की आवश्यकता है जो ना केवल अपनी जगह पर परन्तु पूरे संसार भर में सुसमाचार फैलाने की आत्मा की दृष्टि रखते हो। हमें कलीसिया में आज ऐसे पुरुषों की आवश्यकता है जो निडर होकर सच्चाई का प्रचार करे, सुसमाचार फैलाने के

लिये कार्य करे तथा कलीसिया के सामने उनकी छवि आदरणीय हो। हमें कलीसिया में ऐसे पुरुषों की आवश्यकता है जिनका विश्वास मजबूत हो, जो मनुष्यों की आत्माओं से प्रेम रखते हो ताकि वे पाप से बचाई जा सके, और ऐसे पुरुषों की आवश्यकता है जो प्रभु और उसके कार्य से प्रेम रखते हो। आज यदि कलीसिया में इस तरह के पुरुष हो तो कलीसिया तरक्की करेगी और सुसमाचार फैलाने का कार्य अच्छी तरह होगा। बिना ऐसे पुरुषों के कलीसिया का कार्य आगे नहीं बढ़ सकता है, अर्थात कलीसिया के कार्यों की गति रूक सी जायेगी।

कलीसिया की औरतों का अपना एक अलग किरदार है, परन्तु उनको भी अपने कार्यों में नेतृत्व लेने की आवश्यकता है। वे सार्वजनिक रूप से बच्चों को सिखाना, जवान औरतों को सिखाना तथा अन्य औरतों को सिखाने का काम कर सकती है। वे अच्छी पत्नियां और माताएं बन सकती हैं और कलीसिया में पुरुषों को सहारा अर्थात समर्थन दे सकती है। वे अपनी मेहमान नवाजी और सिखाने की कला से अपने रिश्तेदारों पड़ोसियों और अपने मित्रों को मसीह का सुसमाचार सिखा सकती है। कलीसिया में औरतों के योगदान के बिना कलीसिया ज्यादा कुछ नहीं कर पायेगी, और ना ज्यादा आगे जा पायेगी।

आज की दुनिया में हमारे सामने जो सबसे बड़ी चुनौती है, वह इस बात को समझने की आवश्यकता है कि दोनों पुरुषों और स्त्रीयों के अपने-अपने काम करने को है जैसा परमेश्वर ने आरंभ से अपने वचन में ठहराया है। जब कोई किसी ओर का काम करने का प्रयास करता है, तो उसका परिणाम समस्याएं होती है। इसी कारण परमेश्वर ने पुरुषों और स्त्रियों के संबंध में सबसे अलग और सबसे स्पष्ट अगुवाई निभाने के किरदार दिये है। जब हर एक जन दूसरे का सम्मान करेगा और उस कार्य को करेगा जिसे परमेश्वर ने करने को कहा है, तो आपस में शांति बनी रहेगी और तरक्की की ओर हम बढ़ेंगे। लेकिन यदि आदमी और औरत अपने-अपने किरदारों को भूलकर एक-दूसरे के किरदारों को निभाएंगे तो उससे दोनों के बीच में प्रतियोगिता की भावना आयेगी तथा टकराव पैदा होगा और रिश्ते में कड़वाहट आयेगी तथा दोनों का जीवन असफलता में परिवर्तित हो जयेगा।

आज कलीसिया को अच्छे अगुवों की बहुत आवश्यकता है। कलीसिया में अच्छे एलड्र्स (प्राचीनों) डीकंस (सेवकों), प्रचारकों और अच्छे बाइबल सिखाने वाले शिक्षकों की आवश्यकता है। आज हमारे पास ऐसे अगुवे तो बहुत हैं जिनके पास कलीसिया के कार्यों को करने का ना तो समय है और ना वे कलीसिया की अगुवाई करने का, समय निकालते है। ऐसे बहुत से अगुवे हैं जो ना तो परमेश्वर के वचन को अच्छी तरह जानते है और ना वे कलीसिया के लक्ष्य को अच्छी तरह समझते है। यदि खेलों के उद्योगों के और राजनीति के प्रभारी उस तरह से अपने कामों को संभालने जैसे अक्सर कलीसिया में अगुवे काम संभालते है तो वे पूरी तरह से असफल होंगे। जहां कोई नीतियां नहीं है लक्ष्य नहीं है और ना कोई अर्थपूर्ण काम है, तो ऐसी स्थिति में हम क्या काम कर सकते है?

हम उस स्तर पर पहुँच चुके है जहाँ पर हम अपनी असफलताओं के निए

बहाने पर बहाने बनाते है। हम अपने आपसे कहते है कि लोगों को सुसमाचार सुनने की रुची नहीं है, लोग धार्मिक सुसमाचार को नहीं सुनेंगे और यह कि टी.वी. और रेडियो पर सुसमाचार का प्रचार करना समय और पैसे की बर्वादी है, लोग सुसमाचार को नहीं पढ़ेंगे ओर इसलिए हम बैठकर सोचते रहे और कुछ ना करें। क्या यही है अगुवाई? ये अगुवाई नहीं है। इस तरह से प्रभु के लोगों को काम नहीं करना चाहिए।

एक सच्चा अगुवा हारेगा नहीं ना ही वह मैदान छोड़कर भागेगा। अगर काम करने का एक तरीका अच्छा फल उत्पन्न नहीं करता तो वह दूसरा तरीका इस्तेमाल करेगा। वह निरंतर खोजेगा और प्रार्थना करेगा, और काम करेगा जब तक वह उस तरीके को न ढूंढ़ ले जिससे वह अपने काम को पूरा कर सके। वह यीशु के शब्दों को याद करता है, कि मनुष्यों से तो यह नहीं हो सकता, परन्तु परमेश्वर से हो सकता है। (मरकुस 10:27)।

सुनिए। संसार पाप में है और हमारे पास इसका इलाज है- मसीह का सुसमाचार, परमेश्वर का अनुग्रह और दया। यदि इस सुसमाचार को सही तरीके से, पेश किया जाये और यदि यह काफी लोगों तक पहुँचें और यदि पापी व्यक्ति को इसकी अहमियत और इसकी आवश्यकता के बारे में अहसास दिलाया जाए तो कोई न कोई सुसमाचार की आज्ञा को मानने को सामने आयेगा। सुसमाचार सुनाते समय हमें इस बात का ध्यान रखने की आवश्यकता है कि हम सच्चाई के साथ समझौता ना करे और झूठी शिक्षा ना सिखाएं जैसे कि केवल विश्वास से या केवल अनुग्रह के द्वारा उद्धार होना तथा इस बात का ध्यान रखना कि हम सुसमाचार को तोड़-मरोड़ कर पेश ना करे। हमें पूरी निडरता और दृढ़ विश्वास के साथ परमेश्वर के वचन अर्थात सत्य का प्रचार करना है और उनसे प्रेम रखना है जिन्हें हम सिखा रहे है।

यीशु ने कहा, था कि हमे सारे संसार में जाकर हर एक जन को सुसमाचार सुनाना है (मरकुस 16:15, 16)। क्या उसने ऐसा कहा था कि नहीं? यदि उसने ऐसा कहा था, तो क्या हम उस कार्य को कर रहे हैं जो उसने हमें करने को कहा था? यदि हम उसके कार्य को नहीं कर रहे हैं, तो क्या हम उसकी आज्ञा का पालन कर रहे हैं? और यदि हम उसकी आज्ञा का पालन नहीं कर रहे हैं, तो किस तरह से हम अपने आपको आत्मिक अगुवे कह सकते हैं?

अगुवे क्या करते हैं? वे कलीसिया की अगुवाई करते हैं तथा इस बात का ध्यान रखते हैं कि सुसमाचार का कार्य सुचारू रूप से हो रहा है कि नहीं ताकि कलीसिया प्रभु के निर्देशों का अच्छी तरह पालन कर सके। और जब बहुत से अगुवे पूरी ईमानदारी के साथ इस तरह से काम करेंगे, तो पूरे संसार में सुसमाचार का फैलाव होगा। प्रभु ने हमें ऐसा कार्य करने को नहीं दिया है जो हम नहीं कर सकते या जिसमें वह हमारी सहायता नहीं करेगा। यदि हमने अपने आपको प्रभु को समर्पण कर रखा है तो हम उसके कार्य को अच्छी तरह करेंगे।

अगुवे बनने के लिये हमें बहुत सारे धन की आवश्यकता नहीं है, ना ही बड़ी मण्डलियों की आवश्यकता है; ओर ना शिक्षा की बड़ी-बड़ी डिग्रीयां हमारे पास होने की आवश्यकता है। एक अच्छा अगुवा बनने के लिये हमें जिन चीजों की आवश्यकता है वे हैं - प्रभु, सत्य विश्वास, प्रेम, जोश, दूरदर्शिता, ज्ञान ओर अपने उद्देश्य के प्रति पूरी तरह सर्म्पण होना।

प्रभु ने हमें वो सारे साधन मुहैया कराएं है जिनका इस्तेमाल करके हम उसके कार्य को अच्छी तरह कर सकते हैं। सुसमाचार फैलाने के लिये हमारे पास प्रभु की स्थानीय मण्डलिया हैं तथा रेडियो, टी.वी. इंटरनेट, सोशल मीडिया डीवीडीएस और साहित्य के माध्यम से ज्यादा से ज्यादा लोगों तक सत्य सुसमाचार पहुँचाया जा सकता है। जगह-जगह सुसमाचार को फैलाने के लिये हम समय-समय पर सुसमाचार सभाएं कर सकते हैं अस्पतालों, स्कूलों, बैंकों और दुकानों में साहित्य छोड़ सकते हैं। बाइबल कॉर्स के द्वारा भी बहुत से लोगों को सुसमाचार सिखाया जा सकता है। जब हम सुसमाचार फैलाने का कार्य करते हैं, तो यह स्वाभाविक है कि हमें काफी विरोध और यात्नाओं का सामना करना पड़े क्योंकि शैतान हमारा विरोधी है, और वह नहीं चाहता कि परमेश्वर का सुसमाचार फैले। परन्तु यह विरोध भी सुसमाचार को फैलाने से हमें रोक नहीं पायेगी। यही बात पहली शताब्दी में हुई थी जो आज हमारे समय में हो रहा है। लोगों ने सुसमाचार का विरोध किया जैसा कि आज भी कुछ लोग कर रहे हैं परन्तु मसीह का सुसमाचार विरोध के बाद भी फैलता ही गया और आज भी परमेश्वर की सामर्थ से फैल रहा हैं परमेश्वर ने जो हमें महान कार्य सौंपा है उसे करने के लिये हमें आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

जब हम आलसी होकर बैठ जाते हैं और अपने स्थानीय लोगों और संसार में सुसमाचार ले जाने से मना कर देते हैं तब हम पूरी मानवता को मसीह के बचाए हुए सुसमाचार से दूर रखते है। इसके परिणामस्वरूप बहुतेरे अपने पापों में खो जायेंगे और अगुवे होने के नाते हमारी खुद की आत्माएं खतरे में पड़ जायेगी क्योंकि हमने प्रभु को निराशा किया।

भाईयों हम कब इस बात को गंभीरता से लेंगे कि हमें आत्माओं को बचाना है। हम हाथ पर हाथ रख कर और आलसी होकर बैठ नहीं सकते यह देखते हुए कि कितने लोग बिना सुसमाचार इस संसार को छोड़कर जा रहे है? हम कब खड़े होंगे और पूरे साहस के साथ सुसमाचार का प्रचार करेंगे? कब हम बेखौफ होकर सुसमाचार का प्रचार करेंगे? हमारे प्रभु का यहूदा के गोत्र का सिंह कह कर सम्बोधित किया गया है। यदि यीशु हमारा प्रभु है और हम प्रभु के है, तो हमारे पास साहसी हृदय होना चाहिए।

क्या आप एक अगुवा (लीडर) है? यदि हां, तो आप अपने घुटनों पर आ जाये, और अपने लिये और अपने सहकर्मी अगुवों के लिये सहायता मांगे ताकि परमेश्वर ने जो आपको कार्य सौंपा है, वह आप अच्छी तरह से कर सके।

नमक या नमक का खम्भा?

डॉ. एफ.आर. साहू (छ.ग.)

तुम पृथ्वी के नमक हो परन्तु यदि नमक का स्वाद बिगड़ जाय तो वह फिर किस वस्तु से नमकिन किया जाए। (मत्ती-5:13)।

इस आयत का भाव हमें बताता है कि यीशु मसीह के लोग इस पृथ्वी के नमक है। परन्तु क्या सचमूच में हम जितने जो मसीही हैं सबके सब पृथ्वी के नमक हैं?

पहले हम देखेंगे कि नमक में पाए जाने वाले गुण ओर अवगुणों की प्रतिकात्मक भाव क्या है, चूंकि प्रभु यीशु यहाँ पर अपने चेलों को संसार में शक्तिशाली प्रभाव बनाने की प्रेरणा देने के लिए इसका स्वाद चीजों को सम्हालने और बचाने की शक्तियों के साथ नमक के रूपक का इस्तेमाल करते हुए कहता है-तुम पृथ्वी के नमक हो।

यदि हम नमक की विशेषता पर गौर करें, तो हमें नमक में तीन प्रभावशाली कार्य देखने को मिलते हैं।

1) नमक कई पदार्थों को खराब नहीं होने देता वरन उन्हें सड़ने से बचाता है।

2) नमक घुलनशील पदार्थ होने के साथ-साथ अन्य पदार्थों को भी अपने स्वभाव के अनुरूप बना देता हैं

3) नमक हर एक पदार्थ को शुद्ध और सुरक्षित रखने की एक महत्वपूर्ण वस्तु है।

इसी प्रकार से आज हर मसीही को भी नमक के गुण जैसा ही शक्तिशाली प्रभाव से परिपूर्ण होना चाहिये क्योंकि यीशु ने कहा था कि ''तुम पृथ्वी के नमक हो।''

और जो सच्चे मसीही होते हैं उनमें अवश्य रूप से नमक के जैसे ही शक्तिशाली प्रभाव पाए जाते हैं। नमक का खम्भा जिसका वर्णन उत्पत्ति की किताब के अध्याय 18, 19 में उल्लेख है। यहाँ हमें लूत और उसके परिवार के विषय में पढ़ने को मिलता है, जो सदोम और अमोरा नगर में रहते थे। लूत सदोम अमोरा का निवासी बन गया था जहां अचानक पाप-विधर्म और दुष्टता के कार्यों में लोग लिप्त थे। उस नगर में लूत को छोड़ और कोई धर्मी नहीं था इस लिये परमेश्वर ने देखा कि उनका पाप भारी हो गया है, उनकी दुष्टता बढ़ गयी हैं, इसलिये परमेश्वर ने उस नगर का विनाश करना चाहा। तब अब्राहम ने परमेश्वर के आगे खड़े होकर कहा, क्या तू सच-मूच में दुष्ट के संग धर्मी का भी नाश करेगा? कदाचित उस नगर में पच्चास, चालीस, तीस, बीस या दस धर्मी लोग हो तो भी?

परमेश्वर ने उत्तर में कहा- ''यदि उस नगर में केवल दस धर्मी भी निकले तो भी उस नगर का नाश नहीं करूंगा।'' (उत्पत्ति 18:23-32)।

लेकिन उस नगर का दुर्भाग्य यह था कि लूत को छोड़ ओर कोई धर्मी नहीं

निकला। इसी तरह से नूह के समय की घटना को भी देखते हैं जिसमें उसके प्राचिन संसार में भी नूह को छोड़ और कोई धर्मी नहीं पाया गया जिसके परिणाम स्वरूप नूह और उसके कारण 8 प्राणी अर्थात केवल उसका परिवार ही बचाया गया, शेष सभी लोग जल प्रलय में डूब कर नाश हो गए।

नमक का खम्भा की इस कहानी की हकिकत जो एक सच्ची घटना पर आधारित है ओर इस घटना के प्रतिकात्मक अर्थ को समझने का प्रयास करते हुए हम देखते हैं कि परमेश्वर ने अपने धर्मीजन को और उसके परिवार को बचाना चाहा और उसी उद्देश्य से परमेश्वर के दूतों द्वारा लूत को चिताया गया कि जितनी जल्दी हो सके तुम अपने परिवार सहित इस नगर से बाहर निकल जाना। (उत्पत्ति 19:15-17 तक देखें)।

यहाँ हम देखते हैं कि परमेश्वर के दूतों द्वारा नगर से हाथ पकड़ कर लूत को और उसके परिवार को बाहर निकाला गया क्योंकि ऐसा करके वह लूत और उसके परिवार को बचाना चाहता था।

परन्तु लूत उस स्थान को छोड़ने में विलम्ब कर रहा था। बाइबल हमें बताती है कि उस स्थान को और उस नगर को लूत ने ही चुना था। क्योंकि जब अब्राहम और लूत अलग हुए तब अब्राहम ने उस स्थान को चुनने की प्राथमिकता दी और लूत ने संसारिक दृष्टि से उस स्थान का चयन भी किया। (उत्पत्ति 13:10, 11)।

हम देख सकते हैं कि लूत ने जो चुना वह मार्ग दुष्ट, अधर्मीयों की ओर और विनाश की ओर जाने वाला उपजाऊ भूमि की लालसा में दुष्टों की संगती की ओर जा रहा था।

प्रिय मित्रों, मनुष्य का चुनाव क्षण भर का आनन्द लेने वाला होता है। पर जब मनुष्य के लिये परमेश्वर चुनता है तो वह आनन्द कभी न समाप्त होने वाला होता है।

परमेश्वर के दूतों द्वारा लूत और उसके परिवार को हाथ पकड़ कर उस नगर से बाहर निकाला गया जो पाप का नगर बन गया था। (उत्पत्ति 19:16)।

परमेश्वर ने दूतों को भेजा ताकि लूत और उसके परिवार को सुरक्षित वहां से बाहर निकाल सके किन्तु लूत की पत्नी का ध्यान अब भी उसी जगह पर लगा हुआ था तभी तो उसने परमेश्वर की आज्ञा को तोड़ते हुए पीछे की ओर मुड़ कर देखा जबकि मुड़कर न देखने की उसे पहिले से चेतावनी दी गयी थी। पर लूत की पत्नी ने पीछे मुड़ कर देखा और वह पृथ्वी का नमक जिसके द्वारा परमेश्वर की महिमा होनी थी एक नमक का खम्भा बन गयी।

इसी तरह से आज बहुत से ऐसे मसीही भी हैं, जो आज तक भी नमक के जैसे गुण स्वभाव को प्राप्त नहीं कर पाए हैं। अपने को मसीही तो कहते हैं परन्तु वही संसारिक अभिलाषाओं में जीवन बिताने के कारण मानो नमक नहीं, नमक के खम्भे के समान हो गए हैं इसलिये की उन्होंने अपनी बुरी अभिलाषाओं से और संसारिक चकाचौंध से कभी मन नहीं फिराया और उन्होंने मसीही जीवन में आगे बढ़ चलने के अलावा संसारिक सुख-विलास की ओर मुड़ कर व्यर्थ और निकम्मी

बातों पर अधिक मन लगाया। आज आवश्यक है कि हर एक मसीही व्यक्ति पीछे न मुड़ कर मसीह में आगे बढ़ते रहने का प्रयास करे।

अध्याय की इस आयत में प्रभु यीशु ने नमक से एक सच्चे मसीही के व्यक्तित्व को दर्शाया है और स्वाद पवित्र आत्मा को परन्तु सड़ाहट और बदबूदार पदार्थ संसारिक बुराईयों को दर्शाता है।

अर्थात जब एक व्यक्ति मसीह को ग्रहण कर लेता है तो उसके जीवन से सब प्रकार की सड़ाहट और खराबी नष्ट हो जानी चाहिए। जिस प्रकार से नमक का अपना प्रभाव सड़ाहट और बदबू को खत्म कर देता है।

और मसीह की आत्मा, अर्थात पवित्र आत्मा जो स्वाद को दर्शाता है, प्रभावशाली होकर अपने आस-पास की बुराईयों को भी नष्ट कर देता है। संसार की सड़ाहट में जी रहे उन लोगों को भी अपनी जीवन शैली के माध्यम से अपने जैसा प्रभावशाली बनाने में आगे बढ़ना चाहिए तब यही बात पृथ्वी के नमक होने का असली प्रतिकात्मक अर्थ होगा।

और जैसा यीशु ने आगे कहा- परन्तु यदि नमक का स्वाद बिगड़ जाए तो वह फिर किस वस्तु से नमकिन किया जाएगा?

प्रियो, जैसे नमक का अपना प्रभाव उचित मात्राओं पर निर्भर करता है, उसी तरह से एक मसीही व्यक्ति का व्यक्तित्व भी उसकी बोली-वचन पर निर्भर करता है। इस लिये एक मसीही व्यक्ति को आत्मिक ऊर्जा में ठण्डे, नीरस और बेजान नहीं होना चाहिये।

इस भाव को समझाते हुए प्रेरित पौलूस कहता है- ''अवसर को बहुमूल्य समझकर बाहर वालों के साथ बुद्धिमानी से व्यवहार करो, तुम्हारा वचन सदा अनुग्रह सहित और सलोना हो कि तुम्हें हर मनुष्य को उचित रीति से उत्तर देना आ जाए।'' (कुलु. 4:5-6)।

पतरस प्रेरित लिखता है- ''यदि कोई बोले तो ऐसा बोले मानो परमेश्वर का वचन है।'' (1 पत. 4:11)। और नमक का खम्भा बन जाने का प्रतिकात्मक अर्थ यह है कि एक मसीही व्यक्ति जो परमेश्वर की महिमा के लिये बुलाया गया है, पर दुख की बात यह है कि कुछ संसारिक अभिलाषाओं के कारण फिर से उसी पुराने जीवन की ओर वापस चला जाता है। (2 पतरस 2:20-22)।

ऐसे मसीही व्यक्ति के विषय में कहते हुए प्रेरित लिखता है- जबकि तुम मसीह के साथ संसार की आदि शिक्षा की ओर से मर गए हो, तो फिर क्यों उनके समान जो संसार के हैं उनके जैसा जीवन बिताते हो? तुम ऐसी विधियों के वश में क्यों रहते हो कि यह न छूना उसे न चखना और उसे हाथ न लगाना (क्योंकि ये सब काम में लाते-लाते नष्ट हो जाएगी) क्योंकि ये मनुष्यों की आज्ञाओं और शिक्षाओं के अनुसार है। (कुलु. 2:20-22)।

प्रियो, परमेश्वर का वचन हमें चिताता है कि हम शारीरिकता और संसारिकता के कामों से परे रहें। संसार की चाहे कोई भी परम्परा हो या रीति-रिवाज या कोई

शिक्षा जो मसीह की शिक्षानुसार नहीं वरन मसीह में हानीकारक है तो उस तरफ मुड़कर भी न देखें।

चौंकसी रखने की चेतावनी देते हुए पौलुस कहता है- चौकस रहो कि कोई तुम्हें उस तत्व ज्ञान और व्यर्थ धोखे के द्वारा अहेर न बना लें, जो मनुष्यों की परम्पराओं और संसार की आदि शिक्षा के अनुसार तो है पर मसीह के अनुसार नहीं। (कुलु. 2:8)।

अर्थात विनाशकारी संसार की ओर मुड़कर देखना स्वयं का छुटकारा और परमेश्वर की महिमा के लिये महत्वहिन के बराबर है।

जैसे लूत की पत्नी ने परमेश्वर की आज्ञा को महत्वपूर्ण न समझकर सदोम - अमोरा के वही लोग और नगर की ओर मुड़कर देखा और वह नमक का खम्भा बन गयी।

प्रियो, इस संसार में निरंतर पाप-अपराध बढ़ता जा रहा है और मनुष्य संसारिकता में लिप्त होता जा रहा है।

जबकि हमारा प्रभु यीशु हमारी खातीर इस जगत में इस लिये आया कि हम बच जाएं। वह लोगों को अधर्म और पापों से निकालना चाहता है।

इसलिये सुसमाचार की आज्ञा मान कर अनन्त जीवन की ओर आगे बढ़ते जाए। परन्तु सदोम-अमोरा जैसे अपने अतीत की ओर फिर से न झाकें और न पीछे मुड़ कर देखें। अन्यथा पृथ्वी के नमक नहीं, नमक का खम्भा बन कर रह जाएंगे। जिसका कोई महत्व नहीं है।

आदमी के लिए ''उसके जैसा सहायक'' इसका क्या अर्थ है?

बैटी बर्टन चोट

जब सब प्राणियों की सृष्टि का कार्य पूरा हो चुका तब आदम ने हर प्राणी का नाम रखा, परन्तु आदम के लिए कोई ऐसा सहायक न मिला जो उससे मेल खा सके (उत्पत्ति 2:20)। परमेश्वर ने आदमी को अपने ही स्वरूप पर बनाया, उसे समझ और भावनाएं दी और एक अनन्त आत्मा दी ताकि वह परमेश्वर की सृष्टि से प्रेम रखे और उसके साथ उसका संबंध बना रहे। अब आदमी को भी लगता था कि प्राणियों में से उसके जैसा कोई नहीं है, जिसके साथ मिलकर वह परमेश्वर की अद्‌भुत सृष्टि की प्रशंसा कर सके।

वास्तव में परमेश्वर की योजना अनुसार आदमी के रूप में आदम की रचना अधूरी थी। चाहे वह अकेला रहकर काम कर सकता था, जिससे लगे कि उसमें अपने आप में कोई कमी नहीं है, पर परमेश्वर को मालूम था कि उसे लैंगिक, शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक और आत्मिक रूप में सम्पूर्ण होने के लिए एक साथी की आवश्यकता है। सो जब आदम को अकेलापन लगा तो

परमेश्वर ने उसे गहरी नींद में सुला दिया और उसकी पसलियों में से एक पसली निकाल ली। परमेश्वर ने स्त्री को, मिट्टी में से नहीं, बल्कि आदमी की पसली से बनाया और उसे उसके पास ले आया। आदम ने कहा, अब यह मेरी हड्डियों में की हड्डी और मेरे मांस में का मांस है, सो इसका नाम नारी होगा, क्योंकि यह नर में से निकाली गई है (उत्पत्ति 2:23)।

आज संसार में हम उन आदमियों और उन औरतों के बारे में सुनते हैं जो विवाह नहीं करते और अकेले रहने को प्राथमिकता देते है। कुछ लोग विवाह करने के बजाय अपना जीवन परमेश्वर को समर्पित कर देते हैं ताकि परमेश्वर उनके मानवीय साथी के न होने की कमी को पूरा कर दे।

कुछ अन्य मामलों में कई बार परिस्थितियां विवाह न करने को विवश कर देती है और इसके कारणों को मानना ही पड़ता है। परन्तु अधिकतर पुरुष और स्त्रियां मानवीय आवश्यकता को पूरा करने और परिवार बनाने की इच्छा से विवाह करते हैं। आदमियों को पत्नी के प्रेम और देखभाल की आवश्यकता होती है, जो उनके घर को चलाने में सहायता करे। स्त्रियों को पति की सुरक्षा और साथी की आवश्यकता होती है। दोनों की बड़ी आवश्यकता यह है कि वे चाहते हैं कि उनके बाद उनकी संतान हो। मानवीय प्रबंध में यह महत्वपूर्ण आवश्यकताएं परमेश्वर ने ही डाली हैं और उन्हें आसानी से अनदेखा नहीं किया जा सकता।

आदमी और जानवरों की तुलना करें और आदमी को अलग करें तो कोई भी स्त्री किसी भी आदमी के जैसी ही मिलेगी। परन्तु हम जानते हैं कि आम तौर पर कई बार कोई खास आदमी और औरत आपस में मेल नहीं खाते। उनके कद काठी में अन्तर हो सकता है। कई बार हम किसी पढ़े-लिखे आदमी का विवाह किसी अनपढ़ स्त्री से होते देखते हैं। जिसका संसार में इसे छोड़ और कोई उद्देश्य नहीं होता कि बस जीना है। कई बार हम देखते हैं कि कोई बहुत ही गंभीर और समझदार स्त्री अपने जीवन में बहुत बड़ी भूल करती है जब वह किसी तंग सोच वाले आदमी को अपना पति बनाना चुन लेती है। यह बहुत ही ध्यान से विचार करने वाली बात है कि जब जीवन साथी का चयन करना हो तो दोनों के जीवन के सब पहलुओं पर विचार किया जाए। सुख और चैन प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि जैसा परमेश्वर ने चाहा था कि स्त्री और पुरुष आपस में मेल खाते हो।

स्त्री एक सहायक कैसे हो सकती है? जैसे पहले भी कहा गया है कि वह तो अपने पति की जीवन भर की साथी है। आरंभ से तो परमेश्वर ने नहीं चाहा था कि तलाक हो। उसकी योजना थी कि जीवन भर के लिए एक पुरुष के लिए एक स्त्री हो। इस सच्चाई को और दृढ़ करते हुए यीशु ने कहा था कि, क्या तुम ने नहीं पढ़ा कि जिस ने उन्हें बनाया, उसने आरंभ से नर और नारी बनाकर कहा, कि इस कारण मनुष्य अपने माता-पिता से अलग होकर अपनी पत्नी से मिला रहेगा और वे दोनों एक तन होंगे? सो वे अब दो नहीं परन्तु एक तन है; इसलिए जिसे परमेश्वर ने जोड़ा है, उसे मनुष्य अलग न करें (मत्ती 19:4-6)।

जीवन भर के साथी होने के कारण वे एक दूसरे के ज्ञान और समझ में बढ़ेंगे। वे अकेले नहीं, बल्कि इक्ट्ठे, मानवीय आशीष का महत्वपूर्ण भाग बनेंगे। यदि उनकी जोड़ी बिल्कुल सही है तो भी जवानी के फैसले करने और चुनौतियों के लिए

वे एक दूसरे की सामर्थ और सहायता बनेंगे। बुढ़ापे की कमजोरी और बीमारी में वे एक दूसरे का सहारा बनेंगे।

जो सहायक उससे मेल (खा सके का उद्देश्य यह था कि आदमी की कमियों को दूर करने के योग्य औरत ही है। जैसे मां की भूमिका में), या जीवन के उसके काम और जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए उसकी सहायता करने के द्वारा। क्या कोई ऐसा किसान है जिसे फसल को बोने, उसकी रखवाली करने और कटाई करने के लिए अपनी पत्नी और बच्चों की आवश्यकता न हो? कितने ही छोटे व्यापारी अपना हिसाब-किताब रखने या नये ऑर्डर बुक करने और दुकान चलाने के लिए अपनी पत्नी पर निर्भर होते हैं। नये नियम में अकविल्ला तम्बू बनाने का काम करता था और उसकी पत्नी प्रिसकिल्ला उसकी सहायता करती थी (प्रेरितो 18:2, 3)।

बाइबल के अनुसार बच्चों को संसार में लाना उनका पालन-पोषण करना, पति की संभाल करना और घर की देखभाल करना पत्नी का प्रमुख कार्य है। तीतुस को पौलुस ने लिखा था कि बूढ़ी स्त्रियों को समझाए कि वे जवान स्त्रियों को चेतावनी देती रहें कि अपने पतियों और बच्चों से प्रेम रखें, और संयमी पतिव्रता, घर का कारबार करने वाली हो (तीतुस 2:4, 5)। तीमुथियुस को आज्ञा मिली थी कि वह जवान विधवाओं (उन जवान स्त्रियों को भी जिनका अभी विवाह नहीं हुआ) उन्हें आज्ञा दे कि वे ''विवाह करें, और बच्चे जनें और घर बार संभाले, और किसी विरोधी को बदनाम करने का अवसर न दे'' (1 तीमुथियुस 5:14)।

पति को परिवार के लिए कमाई करने पर ध्यान देना चाहिए और पत्नी को बच्चों को जन्म देना और उनका पालन-पोषण करना और घर की देखभाल करना, यदि स्त्री इस काम को सही ढंग से करती है तो उसका समय बिल्कुल अच्छा गुजरेगा। कुछ लोग जो स्त्री की जिम्मेदारी के महत्व को समझते नहीं हैं वे उसके काम को नौकरानी का काम कहकर उसकी कदर कम कर देते हैं। परन्तु परमेश्वर ने स्त्री को महिमा दी है कि वह अपने से आगे की पीढ़ियों की आत्माओं को अनन्तकाल के लिए तैयार करे। जब हम संसार की नैतिकता के संबंध में समस्याओं की ओर ध्यान करते हैं जिसमें बढ़ रहे अत्याचार भी शामिल हैं तो इस तथ्य से हमें पता चलता है कि इस सब का कारण यही है क्योंकि स्त्रियों ने घर-बार संभालने का काम छोड़ दिया है और जिसके कारण घरों के घर तबाह हो रहे हैं। ऐसा होता और हो रहा है, क्योंकि जैसे-जैसे स्त्रियां घर का काम काज छोड़कर बाहर जाकर काम संभालती है तो उतनी ही रफ्तार से संसार की पारिवारिक समस्याओं में बढ़ोतरी हो रही है। इस सब का कारण जो भी हो, स्त्री के लिए और कोई काम कितना भी महत्वपूर्ण क्यों न हो, परन्तु पत्नी और मां के लिए परमेश्वर की ओर से दिए कार्य को पूरा न करने के कारण घरों के घर बर्वाद हो रहे हैं।

बच्चों की देखभाल और घर में आदमी की सहायक उससे मेल खाती बनने के साथ स्त्री को चाहिए कि वह अपने पति के साथ मिलकर रहे। उसे प्रयत्न करना चाहिए कि वैसे ही कपड़े पहने जो उसके पति को पसंद हो। उसे चाहिए कि वह अपने पति की सोच के अनुसार अपने आपको ढाल ले ताकि वे अपने संसार और शेष संसार की समस्याओं से परिचित हो। उसे अपने पति की भावनाओं को समझना चाहिए, ताकि उसके जीवन में खुशियां आ सके। सफल पत्नी अपने पति की पक्की

दोस्त और उसकी राजदार होती है।

पत्नी जो आदमी से मेल खाती है अपने पति के परिवार के साथ अच्छे संबंध बनाती है, क्योंकि उसे मालूम है कि यदि उससे अपने पति के किसी संबंधी के साथ बैर रखा तो उनके अपने संबंध में दरार पड़ सकती है। प्रभु यीशु की हमें दो कोस चला जाने की सलाह (मत्ती 5:38-42) परिवार में मानवीय निर्बलताओं को दूर करने के लिए बहुत लाभदायक होगी। यीशु ने शिक्षा दी थी यदि कोई तुझे एक मील ले जाये तो दो मील चला जा।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पत्नी अपने पति के साथ आत्मिक सहभागिता भी रखे। यदि पत्नी और बच्चे घर पर रहें और पति अकेला ही आराधना के लिए जाए तो इससे न तो पत्नी की और न बच्चों की आत्मिक उन्नति होगी। सच तो यह है कि पति की उन्नति भी वैसे नहीं होगी जैसे होनी चाहिए, क्योंकि उसकी अकेले की उन्नति होगी। परमेश्वर की इच्छा के अनुसार हर किसी की आत्मिक उन्नति के लिए पूरे परिवार की उन्नति आवश्यक है। जब परिवार के सब लोग आत्मिक बातचीत को आपस में करेंगे, पवित्र शास्त्र को पढ़कर उस पर विचार करेंगे, इकट्ठे प्रार्थना करेंगे तो इस सब से वे परमेश्वर के ज्ञान में बढ़ेंगे।

पतरस प्रेरित ने स्त्रियों को लिखा है, तुम्हारा शृंगार दिखावटी न हो वरन तुम्हारा छिपा हुआ और गुप्त मनुष्यत्व, नम्रता और मन की दीनता की अविनाशी सजावट से सुसज्जित रहे, क्योंकि परमेश्वर की दृष्टि में इसका मूल्य बड़ा है। वैसे ही हे पतियों तुम भी बुद्धिमानी से पत्नियों के साथ जीवन निर्वाह करो और स्त्री को निर्बल पात्र जानकर उसका आदर करो, यह समझकर कि हम दोनों जीवन के वरदान के वारिस हैं, जिससे तुम्हारी प्रार्थनाएं रूक न जाए। (1 पतरस 3:4,7)।

जब पौलुस ने इफिसुस में एक पत्र मसीही स्त्रियों के नाम लिखा उसने उनसे कहा, हे पत्नियों अपने अपने पतियों के ऐसे अधीन रहो जैसे प्रभु के (इफिसियों 5:22), तो क्या उसके कहने का अभिप्राय यह था कि आदमी को परमेश्वर की ओर से अधिकार मिला है कि वह स्त्री को पांव की जूती समझे? क्या उसके अपने विचार नहीं हो सकते? निश्चय ही, परमेश्वर के कहने का अर्थ यह नहीं है।

यह सच है कि स्त्री को अपने पति का आदर करना चाहिए? परन्तु न तो उसके साथ दुर्व्यवहार हो और न वह दुर्व्यवहार करे। घर की निजी आवश्यकताओं के संबंध में और निजी वस्तुओं के संबंध में स्त्री का अनुभव और ज्ञान उसे पति से अधिक गुणी साबित करता है और अन्य बातों के संबंध में मां और घर का प्रबंध करने वाली होने के कारण उसकी देखभाल का आदर करना आवश्यक है। जब कोई निर्णय लेना हो तो पति और पत्नी को चाहिए कि पहले उस पर विचार विमर्श कर लें ताकि सही निर्णय ले सके। हो सकता है कि स्त्री आदमी के घर की अगुआई करने को अधिक प्रभावित करे, परन्तु बाइबल में घर की अगुआई करने का अधिकार पति को ही दिया गया है।

यदि पत्नी को लगे कि लोकव्यवहार, ज्ञान और निर्णय के संबंध में पति को सचमुच उसकी सलाह की आवश्यकता है तो उसका कर्त्तव्य है कि सहायक होने के कारण वह अपने विचार बड़े प्रेम और विनम्रता से उसे बताए। स्त्री चाहे कितनी भी ज्ञानवान या पढ़ी लिखी क्यों न हो और उसका पति चाहे कितना भी गलत क्यों

न हो, स्त्री के लिए यह बिल्कुल अच्छी बात नहीं है कि वह अपने पति के ऊपर आज्ञा चलाए। इस प्रकार व्यवहार करने से न केवल उसका पति अगुआई करने में कमजोर पड़ेगा बल्कि यह परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन भी है। यदि पति अपनी पत्नी की दादागिरी को सहन करता रहता है तो इससे न केवल उसका नेतृत्व ही कमजोर पड़ेगा बल्कि इससे परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन भी होगा। हमें कभी भी यह नहीं भूलना चाहिए कि अन्त में हम सब को एक-दूसरे के साथ अपने व्यवहार के लिए परमेश्वर को उत्तर देना पड़ेगा।

पति और पत्नी को एक-दूसरे के साथ कैसे रहना चाहिए, इसका बहुत सुन्दर उदाहरण हमारे प्रभु यीशु मसीह और उसकी कलीसिया के विषय में इस प्रकार मिलता है, ''तुम में से हर एक अपनी पत्नी से अपने समान प्रेम रखे और पत्नी भी अपने पति का भय माने'' (इफिसियों 5:33)

विवाह और घर के लिए परमेश्वर की योजना

कोय रोपर

ऐसा प्रेम घर को सफल बनाने में कैसे सहायक हो सकता है?

पहले अगापे प्रेम सफल घर की ओर ले जा सकता है क्योंकि पहले इसका परमेश्वर की ओर जाने वाला होना आवश्यक है। यीशु के अनुसार सबसे पहली आज्ञा (मत्ती 22:37; मरकुस 12:30; लूका 15:27) परमेश्वर से प्रेम करने (अगापे का क्रिया रूप) है। हमारे घर का आकार या बनावट जो भी हो, इस आज्ञा को माना जा सकता है। हर काम में जो हम करते हैं, परमेश्वर को पहिला स्थान देकर हम परमेश्वर से प्रेम कर सकते है, ऐसा हम घर में, कारोबार में, काम या खेल में, हमेशा उसकी इच्छा को मानने की कोशिश करके और व्यक्तिगत संबंधो में उसकी और महिमा करके, उससे प्रार्थना करके और उसके वचन को पढ़कर और उसका अध्ययन करके और उसकी विश्वासयोग्य संतान बनकर कर सकते है। तब हम लगभग मजबूत और खुशहाल घर के होने से सुनिश्चित हो सकते हैं, क्योंकि जिस घर में अन्य सब बातों से परमेश्वर को आदर दिया जाता है, उस घर के बारे में कुछ भी कहो, वह घर सफल ही है।

दूसरा, अगापे प्रेम सफल बनवा सकता है, क्योंकि इससे ऐसे लोग बनेंगे, जिसके साथ रहना आसान है। 1 कुरिन्थियों 13:4-8क में हम पढ़ते हैं-

प्रेम धीरजवनत है, और कृपाल है; प्रेम डाह नहीं करता; प्रेम अपनी बड़ाई नहीं करता और फूलता नहीं। वह अनरीति नहीं चलता; वह अपनी भलाई नहीं चाहता, झुंझलाता नहीं, बुरा नहीं मानता। कुकर्म से आनन्दित नहीं होता, परन्तु सत्य से आनन्दित होता हैं वह सब बातें सह लेता है, सब बातों की प्रतीति करता है, सब बातों की आशा रखता है सब बातों में धीरज धरता है। प्रेम कभी टलता नहीं।

क्या इन विशेषताओं वाले व्यक्ति के साथ रहना आसान नहीं होगा?

तीसरा, अगापे प्रेम सफल परिवार की ओर ले जा सकता है, क्योंकि यह घर

के लोगों को एक-दूसरे से सही व्यवहार करवाएगा। घर के लोगों को एक-दूसरे से आई लव यू कहते रहना तो सराहनीय है, पर हमारे लिए इससे भी महत्वपूर्ण घर के माहौल में अपने कामों में प्रेम को दिखाना है। अपने घरों में हमें वैसा करने की आवश्यकता है जैसा यूहन्ना ने समझाया है कि मसीही लोग करे, हे बालकों हम वचन और जीभ ही से नहीं, पर काम और सत्य के द्वारा भी प्रेम करें (1 यूहन्ना 3:18)। 1 कुरिन्थियों 13:4-8क में प्रेम की विशेषताओं में सुझाव है कि हम प्रेम करने वालों को जान सकते हैं, क्योंकि वे प्रेमपूर्वक व्यवहार करते हैं।

व्यावहारिक शब्दों में प्रेमपूर्वक होने का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि दादा/दादी, नाना/नानी, माता-पिता या बच्चा घर में दूसरे के साथ वैसा व्यवहार करेगा/करेगी जैसा वह चाहता/चाहती है कि उसके साथ किया जाए (मत्ती 7:12)।

हमें समझने की आवश्यकता है कि विवाह और परिवार के संबंध मानवीय संबंध हैं और सब मानवीय सम्बंधों को चलाने वाले नियम घर में लागू होते हैं। मैंने पति और पत्नी के संबंध में करने और न करने वाली बातों की सूची बनाने की भी कोशिश की है। मैं उन कुछ नियमों पर विचार करने की कोशिश कर रहा था जो विशेष रूप से इसी संबंध पर लागू होते हैं; और किसी दूसरे संबंध पर नहीं। मैं नहीं बना पाया, मै केवल यही सोच पाया कि पति-पत्नी के बीच अच्छे संबंध के लिए आवश्यक बातें ही किसी भी दूसरे के बीच अच्छे संबंध पर बातें हैं। विवाह और परिवार में व्यक्तिगत संबंधों के लिए कोई विशेष नियम नहीं है। यदि हम अपने जीवनसाथी अपने माता-पिता या अपने बच्चों के साथ अच्छे सम्बंधों की इच्छा करते हैं तो हमें उनके साथ वैसे ही दयालुपूर्वक और सम्मानपूर्वक व्यवहार करना आवश्यक है जैसे हम और किसी के साथ करते हैं, जिसे हम साथ लेकर चलना चाहते हैं।

आइए इस सब पर विचार करते हैं। यदि हम किसी को अपना मित्र बनाना चाहें तो उसे कैसे मित्र बनाते हैं? यदि हम किसी को मित्र बनाए रखना चाहें तो कैसे करते हैं? हम अपने अच्छे मित्रों के साथ कैसे व्यवहार करते हैं? यही व्यवहार हम अपने माता-पिता अपने जीवनसाथी और अपने बच्चों के साथ करते हैं तो हम उनके साथ प्रेम से रहते है।

इसके विपरीत जहां परिवार में किसी दूसरे की आवश्यकताओं पर ध्यान दिए बिना स्वार्थ में हर कोई अपनी ही रूचि के अनुसार कार्य करता है। वहां लोग एक-दूसरे के साथ चीख-चीखकर और कठोरता से बात करते हैं। बच्चे जब अपने माता-पिता के साथ बदतमीजी से बात करते या उनका कहना नहीं मानते हैं तो वे यह दिखा रहे होते हैं कि उनमें प्रेम नहीं है। माता-पिता जब बिना बात अपने बच्चों की आलोचना करते या बच्चों की आवश्यकताओं की अनदेखी करते हैं तो वे अगापे प्रेम नहीं दिखा रहे होते। बड़े बच्चे जब अपने माता-पिता की परवाह नहीं करते तो वे दिखा रहे होते हैं कि वे उनसे प्रेम नहीं करते, और माता-पिता जब अपने बड़े हो चुके बच्चों या नाती-पोतों पर अपनी इच्छा स्वार्थपूर्ण ढंग से थोपने का प्रयास करते हैं तो वे यह दिखा रहे होते है कि उनमें अगापे प्रेम नहीं है।

परन्तु यदि परिवार का हर सदस्य हर परिस्थिति में प्रेम से कार्य करने का भरसक प्रयास करता है और हर किसी के साथ सही बर्ताव करे तो घर समृद्ध होता है। यह घर खुशहाल ही होगा। बिना तलाक के बना रहेगा, परमेश्वर को भाएगा

और दूसरों को मसीह का प्रेम दिखाएगा।

चौथा, अगापे प्रेम सफल घर की ओर ले जा सकता है क्योंकि ऐसा प्रेम मुख्यत: एक समर्पण होता है। परमेश्वर हमसे प्रेम करता है जिस कारण वह जो हमारे लिए सबसे अच्छा है, वही करने को समर्पित है। हमें परमेश्वर से प्रेम करना आवश्यक है- इस कारण हमें परमेश्वर को समर्पित होना और उसकी इच्छा को पूरी करते रहना चाहिए। हमें एक-दूसरे से भी प्रेम करना आवश्यक है, इस कारण हमें एक-दूसरे के समर्पित होना आवश्यक है। पति अपनी पत्नी से प्रेम रखे, जिसमें उसका उसे समर्पित होना शामिल है। माता-पिता को अपने बच्चों से प्रेम करना चाहिए और बच्चों को अपने माता-पिता से प्रेम करना चाहिए, अन्य शब्दों में उन्हें एक-दूसरे के प्रति समर्पित होना चाहिए। हर घर चाहे वह कितना बड़ा या छोटा हो, ऐसे प्रेम से भरा होना चाहिए, जिसकी पहचान परमेश्वर और मनुष्य की शुभ इच्छा और सही काम करने के समर्पण से तय होती है। ऐसे घरों को सफल कहा जा सकता है।

ये सबक कुंआरों के साथ-साथ विवाहित लोगों पर भी लागू हो सकते है। परन्तु अगापे प्रेम एक समर्पण है जिस पर उस प्रेम के संबंध में पति-पत्नी का एक दूसरे के लिए है, विशेष रूप में जोर दिया जाना चाहिए।

पुरुष और स्त्री जब विवाह करते हैं, तो वे अपने आप को एक-दूसरे को सौंप देते हैं। विवाह के संदर्भ में आई लव यू का अर्थ है या होना चाहिए मैं तुझे अपने आपको देता/देती हूं, मैं अपने आप को तुझे सौंपता/सौंपती हूं। किसी भी और समर्पण से बढ़कर यह समर्पण विवाह को छूटने नहीं देगा। इतने तलाक होने का एकमात्र कारण ऐसे समर्पण का न होना है।

मेरी पत्नी शार्लट ने स्टेट यूनिवर्सिटी में परिवार का समाजशास्त्र की पढ़ाई की। उसके प्रोफेसर ने आधुनिक समाज में परिवार टूटने की चर्चा की और शार्लट यह सुनकर हैरान रह गई कि घर का काम करने के लिए पति और पत्नी दोनों का एक-दूसरे के प्रति और विवाह के प्रति समर्पित होना सबसे आवश्यक है। उसने कहा कि आवश्यक नहीं कि नकाम रहने वाले परिवारों की बने रहने वाले परिवारों से समस्याएं अधिक हो; इसके विपरीत नाकाम रहने वाले विवाहों में टिके रहने वाले विवाहों में दोनों के समर्पण की अपेक्षा कम से कम एक साथी में समर्पण की कमी होती है।

हम दिल से इस मूल्यांकन से सहमत हो सकते है। कठिन समय आएंगे; भावनाएं कई बार धोखा देंगी। रोमांस एक कोमल फूल है, हमें इसे जीवित रखने की कोशिश करनी चाहिए; पर परीक्षा के समयों में हमारी बड़ी से बड़ी कोशिशों के बावजूद यह मुरझा सकता हैं ऐसे समयों में विवाह को कौन बनाए रखेगा? केवल अगापे प्रेम पर आधारित समर्पण हमें परमेश्वर को उसके वचन को सम्मान देने के लिए करने देना आवश्यक है। हर पति को अपनी पत्नी को समर्पित होना आवश्यक है और हर पत्नी को अपने पति को समर्पित होना आवश्यक है। हर साथी को विवाह के प्रति समर्पित होना आवश्यक है। यह समर्पण पति और पत्नी की विश्वसनीयोग्य बने रहने और इक्ट्ठे रहने में सहायक होगा।

मसीह की शिक्षाएँ

जोएल स्टीफ़न विलियम्स

मसीही लोग यीशु, को एक महान शिक्षक के रूप में भी मानते हैं। कदाचित यीशु कभी स्कूल नहीं गया था (यूहन्ना 7:15)। तौभी उसकी शिक्षाओं को सुनकर लोग दंग रह जाते थे (यूहन्ना 7:46)। यीशु अकसर दृष्टान्तों के द्वारा शिक्षा देता था। उन दृष्टान्तों में वोह बड़ी ही साधारण वस्तुओं के बारे में बताता था। और अन्य लोगों से हटकर, वोह न केवल सिखाता था पर उन बातों पर स्वयं अमल भी करता था। (मत्ती 23:3)। वोह शिक्षा अधिकार से देता था (यूहन्ना 3:34; 7:16; मत्ती 7:28-29)। उसे किसी और मनुष्य के अधिकार का हवाला नहीं देना पड़ता था। वोह कहता था, ''मैं तुम से कहता हूं'' (मत्ती 5:22,28,32,34,34,44)। न केवल उसने सच्चाई सिखाई, पर वोह स्वयं ही सच्चाई था (यूहन्ना 14:6)। यीशु ने जिस मार्ग पर चलने की शिक्षा दी थी, वही प्रसन्नता का मार्ग है। (यूहन्ना 10:10; मत्ती 5:3-12)। आज अनेक मनोचिकित्सकों का मानना है कि खुश रहने के लिये जिन बातों को वे आज लोगों को कहते हैं वे वही हैं जिनकी शिक्षा यीशु देता था।

यीशु के कुछ दृष्टान्त बड़े ही रोचक और आत्मिक गहराई से परिपूर्ण हैं। जैसे कि लूका 15 अध्याय में, खोई भेड़, खोए सिक्के, और खोए पुत्र के दृष्टान्त हैं। इन तीनों दृष्टान्तों से हमें यह शिक्षा मिलती हैं कि परमेश्वर चाहता है कि हम सब उसके पास लौटकर आ जाएँ और वोह हमें स्वीकार करेगा। यूहन्ना 10 अध्याय में से हम अच्छे चरवाहे के दृष्टान्त को भी पढ़ सकते हैं। मत्ती ने अपनी पुस्तक में यीशु की कुछ प्रमुख शिक्षाओं का वर्णन किया है। निम्नलिखित तीनों स्थानों में से पढ़िए, ताकि आप यह जानें कि क्यों यीशु को एक महान शिक्षक माना जाता है।

1. पहाड़ी उपदेश (मत्ती 5:1-7:28)।
2. राज्य के दृष्टान्त (मत्ती 13:1-53)
3. राज्य में जीवन (मत्ती 18:1-35)।

नैतिकता तथा उत्तम जीवन के सम्बन्ध में जो शिक्षाएँ यीशु ने दी थीं वे सबसे अलग हैं। यीशु की शिक्षा में केवल ऊपरी दिखावा मात्र नहीं था। उसकी शिक्षाएं मन को छू जाती थीं (मत्ती 23:1-28)। हत्या करना पाप है। पर यीशु ने सिखाया था। कि मनुष्य को सबसे पहले ईर्ष्या और क्रोध जैसी चीज़ों को अपने मन से निकाल देना चाहिए, क्योंकि पाप की जड़ वहीं है (मत्ती 5:21-26)। व्यभिचार पाप है। पर यीशु ने कहा था, कि सबसे पहले हमें अपने मन से लालच और बुरी अभिलाषा को निकाल देना चाहिए। (मत्ती 5:27-30)। यीशु ने न केवल अच्छे कामों को करने की शिक्षा ही दी थी, पर यह भी सिखाया था कि हमारे उद्देश्य और दृष्टिकोण भी सही होने चाहिए (मत्ती 6:1-6, 16-18)। यदि स्वार्थ के साथ कोई भला काम किया जाए तो उसकी अच्छाई खो जाती है। यीशु की अधिकांश शिक्षाएं ''परमेश्वर के राज्य'' के बारे में थीं (मरकुस 1:14-15; मत्ती 13:1-53)। ''परमेश्वर के राज्य'' का अभिप्राय परमेश्वर के अधिकार से है। जब यीशु ने परमेश्वर के राज्य में प्रवेश करने की बात कही थी, तो उसका अभिप्राय स्वर्ग में अनन्त जीवन पाने से था। (मत्ती 25:34)। परमेश्वर के राज्य के बारे में बार-बार सिखाने से यीशु का अभिप्राय यह था कि लोग परमेश्वर को एक राजा की तरह स्वीकार करें और उसकी हर एक बात

को मानें। (मत्ती 6:10)। यीशु ने यह भी सिखाया था कि लोग बुराई से अपना मन फिराएं और नम्रता के साथ रहें, तथा अन्य लोगों की सेवा करें (मरकुस 1:15; 9:35; 10:15; लूका 22:25-27)।

यीशु ने अपनी शिक्षाओं में सबसे अधिक बल प्रेम के ऊपर दिया था। जिस 'प्रेम' का वर्णन यीशु ने किया था उससे उसका तात्पर्य इस बात से नहीं था कि ''किसी के प्रति अच्छा सोचा जाए'' या ''किसी से सहानुभूति रखी जाए''। पर यीशु का अभिप्राय ऐसे प्रेम से था कि निःस्वार्थ भावना से अन्य लोगों की भलाई को सबसे ऊपर रखा जाए। उसने सिखाया था कि हमें अपने शत्रुओं से भी प्रेम रखना चाहिए (मत्ती 5:43-48)। जो हमारे साथ अच्छा व्यवहार रखते हैं उनके साथ अच्छा व्यवहार रखा जा सकता है, पर क्या हम उस व्यक्ति के साथ भी अच्छा व्यवहार रखेंगे, जो हमारी बुराई करता और चाहता है? यीशु ने अपने चेलों को सिखाया था कि वे ''आपस में प्रेम रखें'' (यूहन्ना 13:34; यूहन्ना 15:10; 1 यूहन्ना 5:3; 2 यूहन्ना 6)। यीशु ने सिखाया था कि प्रेम रखना मनुष्य का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है। ''तू परमेश्वर अपने प्रभु से अपने सारे मन और अपने सारे प्राण अपनी सारी बुद्धि के साथ प्रेम रख। बड़ी और मुख्य आज्ञा यही है।'' यीशु ने कहा था, ''और उसी के समान यह दूसरी भी है, कि तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।'' (मत्ती 22:37-39; मरकुस 12:29-30; लूका 10:27; व्यवस्था 6:5)। और यीशु ने यह कहकर हमें यह ''सुनहरा नियम'' भी दिया था कि ''जैसा तुम चाहते हो कि अन्य लोग तुम्हारे साथ करें, वैसा ही तुम उनके साथ भी करो।'' (मत्ती 7:12; लूका 6:31)। निःसंदेह, यीशु के पास ''जीवन के वचन'' हैं। (यूहन्ना 6:68)।

जब तक वह न आए सहभागिता और प्रभु भोज

ओवन डी. आल्ब्रट

1 कुरिन्थियों 11:17-34

1 कुरिन्थियों 11:17-34 में पौलुस ने कुछ सदस्यों के तरीके को सुधारना चाहा जो प्रभु भोज का सम्मान नहीं करते। प्रभु भोज खाते हुए मसीह के साथ अपने सम्बंध को सुधारने के बजाय वे इसे बिगाड़ रहे थे (2 कुरिन्थियों 11:17)। भोज को सही ढंग से लेने वालों और आत्मिक रूप में इसमें शामिल न होने वालों के अलग-अलग हिस्से बन गए हैं। स्पष्टतया जो सही कर रहे थे और जो नहीं कर रहे थे उनमें आपस में फूट पड़ गयी थी (1 कुरिन्थियों 11:18, 19; मत्ती 10:34-36; पर विचार करे लूका 12:51-53)।

इस संदर्भ में ''भोज'' का अर्थ शाम के समय लिया जाना नहीं निकालना चाहिए। यह उस पृष्ठभूमि की बात है जिसमें यीशु ने इसकी स्थापना की थी न कि इसे मनाए जाने के दिन के समय पर। यह प्रभु का भोज इसलिए है क्योंकि इसे उसी ने स्थापित किया और यह उसके सम्मान में होता है (1 कुरिन्थियो 11:23-25)।

पौलुस की चिंता (11:18)

यह लिखते समय कि ''क्योंकि खाने के समय एक-दूसरे से पहले अपना भोज खा लेता है'' (1 कुरिन्थियों 11:21) पौलुस की क्या चिंता थी? इसकी कम से कम तीन संभावनाएं हैं :

(1) ''कुरिन्थी लोग प्रभु-भोज से बढ़कर **'प्रीति भोज'** (देखें यहूदा 12) को

प्राथमिकता दे रहे थे। अधिक धनवान लोग निर्धनों और या गुलामों के साथ बांटे बिना जो कुछ लाते थे उसे खा लेते थे।''

इस व्याख्या के साथ समस्या यह है कि पौलुस की बड़ी चिंता प्रभु-भोज नहीं बल्कि अगापे फीस्ट या प्रीति भोज था। वह निर्धनों के साथ बांटे बिना खाने के लिए कुछ लोगों को सुधार नहीं रहा था बल्कि भोज को अपवित्र करने के कारण सुधार रहा था। यदि उसे जरूरतमंदो की इतनी ही चिंता थी तो उसने अधिक धनवानों को अपने भोजन को बांटने का निर्देश क्यों नहीं दिया? स्पष्टतया वे इतने निर्धन नहीं थे कि उनके पास भोजन न हो, क्योंकि उसने उन्हें अपने अपने घरों में खाने को कहा (1 कुरिन्थियों 11:22, 34)। कुछ लोग भोजन लाते थे और दूसरे नहीं लाते थे।

यदि प्रभु भोज खाने के लिए इकट्ठा हुए मसीही लोगों में सामान्य भोजन स्वीकार्य होता तो पौलुस उन्हें इन भोजनों के खाने के लिए उपर्युक्त आचरण के संबंध में निर्देश देता। इसके विपरीत समस्या प्रभु भोज के बजाय या उसके साथ अपना भोज खाने के द्वारा प्रभु भोज को कुछ लोगों द्वारा अपमानित किये जाने की थी। वे इसे उपर्युक्त सम्मान नहीं दे रहे थे। इसलिए उसने उन्हें प्रभु भोज को एक खाने में बदलकर अपवित्र करने के बजाय अपने घरों में खाने की सलाह दी। उसकी चिंता यह थी कि वे उन सामान्य भोजनों में जिनके शारीरिक लाभ थे और प्रभु भोज में जो आत्मिक आशिषों के उद्देश्यों से था, अन्तर को समझे। प्रभु के साथ सहभागिता के लिए उनके इक्ट्ठा से बाहर, अपने-अपने घरो में खाने से उनकी शारीरिक भूख ही मिटनी थी।

एंथनी सी. मिसल्टन ने सही लिखा है, हमें आयतों 17-34 को अगापे (प्रीति भोज) और प्रभु भोज पर किसी प्रकार की तारीख की गलती की अवधारणा से नहीं लेना चाहिए। न्यूमैन इस बात से सहमत था-

उस काल में जिसकी गवाही टरटुलियन देता है, वे अगापे भोजन यूखरिस्त से जुड़े नहीं थे; वह स्पष्ट कहता है कि प्रभु ने भोजन के अवसर पर सेक्रामेंट की स्थापना की, जबकि कलीसिया ऐसे नहीं बल्कि दिन चढ़ने से पहले इसे मनाती है। सताव के समयों और उनके उत्सव के मनाए जाने की गुप्त रात्रि-कालीन सेवाओं से अलग थी, यूखरिस्त किसी भी भोजन से पूर्व निरन्तर मनाया जाता था। यह नियम कि यूखरिस्त केवल खाली पेट लिया जाए, सामान्य भोजन पहले लेने के किसी भी संबंध को और विशेषकर अगापे को निकालकर इसे शाम के समय बना देता हैं जिसका टरटुलियन ने पक्का प्रमाण दिया है।

(2) कुछ सदस्य प्रभु भोज को एक सामान्य भोजन के रूप में अर्थात प्रभु भोज के बजाय अपने ही भोज के रूप में खा रहे थे। इस मामले में मेज पर कोई और भोजन नहीं होता था; प्रभु भोज में इस्तेमाल के लिए केवल रोटी और दाख का रस होते थे। लोग यीशु को स्मरण करने के प्रयास के बजाय, या इसके साथ अपने ही पेट की भूख मिटाने के लिए इन प्रतीकों को खा रहे थे।

इस व्याख्या की कमजोरी यह है कि यह खाने के समय एक दूसरे से पहले अपना भोजन खा लेता है की पौलुस की बात का जवाब नहीं देती (1 कुरिन्थियों 11:21)। लगता है कि पौलुस के कहने का अर्थ था कि कई लोग अपना अपना भोजन ले आते थे और उसे खा लेते थे। इसके अलावा हमें चकित होना आवश्यक है कि क्या प्रभु भोज में भोजन के लिए इतनी रोटी और नशे के लिए इतना दाखरस दिया जा सकता था।

(3) मसीही लोग अपना अपना भोज लाते थे या भोजन मेजबान द्वारा उपलब्ध कराया जाता था। एच. एल भोज का यह विचार था। सम्भवतया: पौलुस के कहने का अर्थ था कि सब के मिलकर भोजन का इस्तेमाल करने के बजाय हर कोई अपनी लाई चीजें खा लेता था।

थिस्लटन की टिप्पणियां ध्यान देने योग्य है-

पौलुस सविनय आपत्ति करता है कि विचाराधीन बात मनाई वाली पार्टी है या व्यक्तिगत खाना, इस पर उन्हें अपने घरों का इस्तेमाल ऐसे उद्देश्यों के लिए करना चाहिए। क्या वे एक ही धार में दोहरे उद्देश्य वाली घटनाओं को रखने के लिए किसी आर्थिक या सामाजिक कारक से मजबूर है?

उसने दो अवलोकनों के साथ आगे कहा-

यहां पौलुस दोहरा अन्तर बताता हुआ प्रतीत होता है- (क) यदि आपका घर है तो आपको प्रभु भोज के अपने जश्न के साथ अतिथियों को खाने के लिए बुलाने के समयों अर्थात अपने घर कलीसिया के रूप में साथी विश्वासियों के साथ मिलने को नहीं मिलाना चाहिए (ख) पवित्र स्थान और आराधना के लिए इक्ट्ठा होने के रूप में किसी के घर के इस्तेमाल के संबंध में और स्पष्ट रूप में पवित्र समय को उसी स्थान के घरेलू इस्तेमाल से नहीं उलझाया जाना चाहिए?

यह सुनिश्चित करने के लिए कि उन्होंने प्रभु भोज और अपने भोजों के बीच स्पष्ट अन्तर किया है, पौलुस ने उन्हें अपने भोजन अपने अपने घरों में खाने को कहा। उनका आपस में इकट्ठा होना अपनी शारीरिक भूख मिटाने के बजाय आत्मिक उद्देश्य से होना चाहिए था।

पौलुस की प्रतिक्रिया (11:22)

पौलुस ने उन से जो खा रहे थे पूछा- परमेश्वर की कलीसिया को तुच्छ जानते हो, और जिनके पास नहीं है उन्हें लज्जित करते हो? (1 कुरिन्थियों 11:22)। क्या उसके कहने का अर्थ यह था कि लोगों के पास बिल्कुल कुछ नहीं था और वे खाने के लिए खरीद नहीं सकते थे? शायद नहीं, क्योंकि उसने संकेत दिया कि जिनके पास खाने को नहीं था उनके घर में खाना था और वे अपने घरों में खा सकते थे। उसने उन से कहा कि यदि वे भूखे हैं तो घर में खाए (1 कुरिन्थियों 11:34) यदि उनके पास खाने को कुछ नहीं था, तो वह और खोलकर नहीं बता सकता था। वह उन्हें निर्धन कह सकता था और उन्हें घर में खाने को कहने के बजाय जिनके पास था उन्हें उन निर्धनों के साथ जिनके पास नहीं था बांटने को कह सकता था।

उस समय के यातायात के साधनों के कारण, नगर में दूर-दूर रहने वाले सदस्यों को एक ही समय में पहुंचने में कठिनाई आती होती। हो सकता है कि आराधना सेवाएं काफी लम्बी हो। स्पष्टतया कइयों को भोज को लेने में प्रभु के प्रति उचित सम्मान दिखाने के बजाय अपने पेट की अधिक चिंता रहती होगी। वे अपने साथ खाने के लिए कुछ न लाने वाले या देरी से पहुंचने वाले अन्य लोगों की परवाह किए बिना अपना अपना भोजन खाने लगते है। पौलुस ने कहा कि उन्हें प्रभु भोज खाने से पहले दूसरों की राह देख लेनी चाहिए। भोजनों के संबंध में उसने उन्हें याद दिलाया कि उनके अपने घर पर हैं जहां वे खा सकते है। (1 कुरिन्थियों 11:20-22)।

भोज के दौरान साधारण भोजन खाने वाले लोग गड़बड़ी और फूट डालकर दूसरों की आराधना में विघ्न डाल रहे थे। वे यीशु और उन लोगों का अनादर कर रहे थे, जो सच्चे मन से उसे आदर देने का प्रयास कर रहे थे न केवल वे वफादार मसीही लोगों के प्रति अपमान दिखा रहे थे बल्कि वे उनका भी अपमान कर रहे होंगे जो खाने के लिए कुछ नहीं लाते थे या न खाना चुनते थे, उनके सामने खाकर उन्हें शर्मिंदा करते होंगे।

धीरजवंत होने के बजाय, प्रभु भोज में भाग लेने वालों को एक दूसरे की प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया ताकि वे मिलकर भोज को खा सके। फ्रैंड फिशर की टिप्पणी सही है,

आपका खाने के लिए इक्ट्ठा होना भोज के जश्न को मनाने के लिए निर्देशों से मेल खाता है। 1 कुरिन्थियों 11:33, 34 में पौलुस ने आयत 21 वाले लोगों को डांट लगाई। जिन्होंने अपना भोज पहले लेकर और इसे प्राथमिकता देकर, अपने भोजनों को प्रभु भोज से प्राथमिकता दी थी। प्रभु भोज एक सामान्य पर्व नहीं है बल्कि इसे एक स्थान के रूप में भी नहीं बनाया गया है जहां लोग अपनी भूख मिटा सकते है।

पौलुस ने अपने इक्ट्ठे होने में भाइयों से प्रभु भोज का सम्मान करके हर संभव रूकावट को दूर करने का आग्रह किया।

भोज की स्थापना पर पौलुस की शिक्षा (11:23-6)

कइयों ने सुझाव दिया है कि पौलुस यीशु द्वारा भोज की स्थापना किए जाने के समय वहां नहीं था, इस कारण उसे इसके बारे में दूसरों से पता चला। आस्कर कल्मैन ने दावा किया, यदि हम उसी के शब्दों पर विश्वास करे (1 कुरिन्थियों 11:23) तो उस पर यह एक विशेष प्रकाशन के द्वारा स्पष्ट किया गया था। पौलुस ने लिखा, मुझे प्रभु से मिला, जो मामले को ठप्प कर देने वाला होना चाहिए। प्रभु भोज का आदर न करने के लिए कुरिन्थियों को डांट लगाने के बाद पौलुस ने भोज के उद्देश्य और अर्थ को समझाते हुए स्थिति को सुधारना चाहा। मसीही लोग एक सामाजिक घटना में भाग लेने या अपनी भूख मिटाने से कहीं बड़े उद्देश्य के लिए इक्ट्ठा होते है। हमें रोटी और कटोरे में उसी भक्तिभाव से भाग लेना चाहिए जैसे हम यीशु के हमारे सामने होने पर उसकी देह और लहू में भाग लेंगे।

यूनानी शब्द सप्पर 1 कुरिन्थियों 11:21 या भोज एक संज्ञा शब्द है जिसका अर्थ केवल दिन का मुख्य भोजन है (देखें मत्ती 23:6; मरकुस 6:21; 12:39)। क्रिया का अनुवाद सपड या सप्पर ऐसे किया है जैसे यह संज्ञा हो न तो संज्ञा और न ही क्रिया रूप दिन के समय का संकेत देता है जिसमें भोजन खाया गया था। संज्ञा की परिभाषा भोजन खाना (दिन के समय या भोजन की किसम के हवाले के बिना) खाना, डाइन (भोजन) करना लूका 17:8; 22:20; 1 कुरिन्थियों 11:25 प्रकाशितवाक्य 3:20 इसका अनुवाद यीशु द्वारा इसकी स्थापना किए जाने पर दिन के समय के कारण लॉर्ड सप्पर किया गया हो सकता है। पर इसका अर्थ प्रभु का भोजन या प्रभु की दावत ही है। उसने बियारी (सप्पर) के पीछे कटोरा भी लिया। (1 कुरिन्थियों 11:25) बिल्कुल सही अनुवाद है पर बियारी या सप्पर के ये शब्द एक क्रिया है जिसका अधिक अक्षरश: अनुवाद खाना खा लेने के बाद या खाने के बाद होगा। विचार यह है कि यीशु ने प्रभुभोज की स्थापना से पूर्व फसह का भोज पूरा कर लिया था। एल्बर्ट बार्नस ने यह निष्कर्ष निकाला:

यह सब सामान्य भोज को मनाए जाने के बाद में हुआ। इसलिए यह इसका भाग नहीं हो सकता, न ही इसे पर्व या केवल दावत कहा जा सकता होगा। प्रेरित ने सहातया उन्हें यह दिखाने के लिए बताया कि यह नहीं हो सकता, क्योंकि वे इसे दावत के अवसर के रूप में मान रहे होंगे। यीशु ने बताया कि उसके चेलों को उसके स्मरण में भोज खाना चाहिए (आयतें 24, 25)।

इस प्रकार जैसे फसह का भोजन इस्राएल में सदा के लिए यादगार होने के लिए था, वैसे ही यीशु अब वास्तविक इस्राएल के लिए यादगार फिर से बना रहा है तो उसके द्वारा अपने छुटकारे को स्मरण रखने के लिए उसके नाम में मेज के गिर्द इक्ट्ठा हो जाते।

कलीसिया प्रभु की मृत्यु को जब तक वह न आए, प्रचार करते है (आयत 26)। प्रचार करने का अर्थ घोषणा करना है। यीशु की मृत्यु का प्रचार करने का एक ढंग प्रभु के मेज पर बांटने वालों के लिए उसके क्रूस पर चढ़ाए जाने वालों की बात बताना है। वे मण्डली को याद दिलाते हैं कि रोटी और कटोरा यानि उसमें अंगूर का रस हमारे लिए यीशु के बलिदान को दर्शाते हैं।